International Journal of Advance and Applied Research
www.ijaar.co.in
ISSN – 2347-7075 Impact Factor – 8.141
Peer Reviewed Bi-Monthly
Vol. 6 No. 40 September - October - 2025

निर्मला पुतुल की कविताओं में चित्रित आदिवासी स्त्री

डॉ. प्रकाश गायकवाड
हिंदी विभाग,
सो.केशरबी सोनाजीराव क्षीरसागर ऊर्फ काकू कला, विज्ञान आणि वाणिज्य महाविद्यालय,
बार्शी रोड, शिवाजीनगर, बीड-431122.
Corresponding Author – डॉ. प्रकाश गायकवाड
DOI - 10.5281/zenodo.17656420

शोधसार

21 वीं सदी में महिला काव्यलेखन में आदिवासी कवयित्री निर्मला पुतुल का महत्वपुर्ण स्थान हैं। निर्मलाजीने संथाल आदिवासी स्त्रियों की पीड़ा, वेदना को अपने काव्य में अभिव्यक्त किया हैं। कवयित्री सूवयं एक आदिवासी स्त्री होने के नाते आदिवासी स्त्री की समस्याओं को उन्होने खुद भोगा हुआ था इसलिए उनका काव्य स्वानुभूति से युक्त हैं। एक आदिवासी स्त्री अनेक अभावों के बीच अपना परिवार किस प्रकार संभालती हैं और अपने पर हो रहे अन्याय व अत्याचार का डटकर विरोध कर अपने हक एवं अधिकारों को प्राप्त करने की कोशिश किस प्रकार करती हैं इसको काव्य के माध्यम सें अत्यंत सरल एवं सपाटबयानी भाषा में अभिव्यक्त किया हैं। अतः इनकी कविताएं आदिवासी स्त्री ही नहीं बल्की समग्र स्त्रियों को प्रेरणादायी साबित हो सकती है।

बीज शब्द: निर्मला पुतुल, आदिवासी स्त्री, पीडा, वेदना, अन्याय, अत्याचार, शोषण, प्रगति, अभाव, हक, अधिकार, प्रेरणा।

21 वीं सदी के साहित्य में प्रायः विविध विमर्शों की काफी चर्चा हो रही है। इन विमर्शों में दलित विमर्श, स्त्री विमर्श, किसान विमर्श, किन्नर विमर्श, अल्पसंख्यंक विमर्श, आदिवासी विमर्श जैसे अनेकों विमर्श आवश्यकतानुरुप निर्माण हो रहे है। इन विमर्शों के माध्यम से साहित्य के कविता, कहानी, उपन्यास तथा अन्य विधाओं में बराबर लेखन भी किया जा रहा है। विविध विमर्शो के माध्यम से अपनों पर हो रहे अन्याय-अत्याचार, एवं शोषण के साथ-साथ अपने हक् एवं अधिकारों का एहसास भी कराया जा रहा है, तथा वह न मिलने पर व्यवस्था के विरोध में संघर्ष करने की प्रेरणा इन विमर्शो के माध्यम से हमें मिलती है। 21वी सदी में आदिवासी विमर्श के संदर्भ में बहुत सारा लेखन एवं चर्चाएं हो रही है। आदिवासी से तात्पर्य ये है की प्राचीनकाल से जंगलों में बसनेवाली मनुष्यजाति । भारतीय संविधान में अनुसूचित जनजाति के रुप में आदिवासी जनसमुदाय का समावेश किया गया हैं। एक विश्लेषण के अनुसार "भारत में अनुसुचित जनजातियों में कुल 71 प्रतिशत जनसंख्या छह राज्यों में निवास करती है। सन 1991 की जनसंख्या के आधार पर भारत में अनुसुचित जनजातियों की कुल जनसंख्या 6.78 करोड हैं।"[1]

आदिवासी समाज की एक स्वतंत्र संस्कृति होती है। यह समूह से रहते है। अलग-अलग भू प्रदेश में रहनेवाले अलग-अलग आदिवासीयों की बोली, खानपान, रहन-सहन, रितिरिवाज, उत्सव, त्योहार यह अलग-अलग होते हैं । अपनी उपजिवीका के लिए वह सदियों सें जंगल, नदी और जमीन पर निर्भर है। गोंड, वारली, संथाल, बंजारा, मिझो, नागा जैसी अनेक आदिवासी जनजातियाँ महाराष्ट्र तथा भारत के अन्य राज्यों में निवास करती है। माना की आज के समय में आदिवासीयों की कुछ जनजातियों में शिक्षा-दिक्षा के कारण थोडी-बहुत प्रगती हो रही है, लेकिन बहुत सी जनजातियों का अभी भी सभ्य समाज के द्वारा शोषण, अन्याय होने की वजह सें या बदलाव को न अपनाने की मानसिकता के कारण वह विकास के पथ पर आने के लिए कतराती दिखाई देती है। ऐसे जनजातियों को सभ्य समाज के जैसे जीवन यापन करणे के लिए तथा अपने अधिकारों का एहसास दिलाने के लिए अनेकविध रचनाएं हिंदी साहित्य में लिखी गई है और लिखी जा रही हैं।

प्रस्तुत शोध आलेख में झारखण्ड राज्य की संथाली भाषा तथा संथाल जनजाति की प्रसिद्ध कवयित्री निर्मला पुतुल की कविताओं में अभिव्यक्त स्त्री की गहनमत पीड़ा एवं वेदना के अनेक पहलूओं को उजागार किया गया हैं। अभिव्यक्ति के अनूठेपन के साथ अत्यंत सरल एवं सपाटबयानी भाषा में निर्मलाजीने अपनी कविताओं मे स्त्रियों की वेदना के साथ-साथ अन्य विषयों पर भी कविता लिखकर पाठकों को सोचने के लिए मजबूर किया है । निर्मलाजीने प्रमुखतः अपनी मातृभाषा संथाली में काव्यलेखन किया है । उसमें से एक काव्यसंग्रह 'नगाडे की तरह बजते शब्द' को हिंदी में अनूदित किया गया हैं। हिंदी में 'अपने घर की तलाश' में और 'बेघर सपने' नाम के दो काव्यसंग्रह उन्होंने लिखे हुए है । निर्मला पुतुल स्वयं एक आदिवासी स्त्री होने के नाते आदिवासी स्त्रियों की पीड़ा का चित्रण उन्होने स्वानुभूति के माध्यम से अभिव्यक्त किया है। आज हम देखते है की, सभ्य समाज के स्त्रियों पर हो रहे अन्याय, अत्याचार एवं शोषण में पुर्णरुप से परिवर्तन तो नहीं हुआ है, तो आदिवासी स्त्रियों की स्थिति में कैसे हो सकता है ? इसको अत्यंत प्रभावी ढंग से शब्दबद्ध करने का प्रयास निर्मलाजी ने किया है।

समाज में अपने हक एवं अधिकारों को प्राप्त करने तथा अपनी पीड़ा को अभिव्यक्त करने के लिए प्राचीन काल से स्त्री संघर्ष करती आ रही है। अपने कर्तव्यों को स्वीकार करते हुए भी स्त्री को निरंतर परिक्षाओं तथा सामाजिक कसौटियों पर उतरना पडता है । चाहे वह रामराज्य की सीता हो या आज के रावणराज की नारी, उसकी पीडा का अंत अभी भी शेष है। निर्मलाजीने नारी के इसी संघर्षो को अपनी ओजस्वी वाणी प्रदान की है । उनका संघर्ष यहां दोगुना है एक स्त्री और दुसरा आदिवासी संथाली स्त्री के रुप में । आदिवासी स्त्रियों के मन मानस को कविता का विषय बनाकर उनकी चिंताओंसे कवयित्रीने अपने काव्य की विषयवस्तु बनाया है। निर्मलाजीने आदिवासी स्त्री की दिनचर्या, सूनापन, व्यस्तता, श्रम, एवं उनके मौन संसार को अपने कविताओं का विषय बनाया हैं। अपनी कविताओं के माध्यम से एक स्त्री का पुरा जीवन पुर्णतया हमारे सामने उद्घाटित कर दिया है। स्त्री अपने परिवेश, वहाँ के संस्कार, नियम, वर्जनाएं सब सहन करती है और वह भी मौन रुप से। वह अपने कष्ट को खुलकर बता भी नहीं सकती परंतू उसे सहन करने के लिए

विवश है। निर्मलाजी ने अनेक सारगर्भित प्रश्न किए है जो अपने अंदर गूढ उत्तर और स्त्री की गहन पीड़ा व विवशता को समेटे हुए है।

‘‘पढा है कभी
उसकी चुप्पी को दहलीज पर बैठ
शब्दों की प्रतिक्षा में उनके चेहरे को ?....
अगर नहीं
तो फिर जानते क्या हो तुम
रसोई और बिस्तर के गणित से परे
एक स्त्री के बारें में? ’’[2]

यहां रसोई और बिस्तर से परे जाकर स्त्री के अंतर्मन की भावनाओं को समझने की बात की गई है। कवयित्री कहती है कि, आदिवासी स्त्री अपने अंचल के विकास के लिए प्रयास करना चाहती है, साथ चलना चाहती है, सोचना चाहती है और अपनी बस्ती का नया मानचित्र गढना चाहती है। उसकी योग्यता, ज्ञान, विचार को समझने वाला उस अंचल में कोई नहीं है। प्रत्युत कामी पुरुषों की कामुक दृष्टि उसके शरीर पर ही होती है वह कहती है –

“जब मैं तल्लीन होती किसी
योजना का प्रारुप बनाने
या फिर तैयार करने बस्ती का नक्शा
तुम्हारे भीतर बैठा आदमी
मेरे तन के भूगोल का
अध्ययन करने में लग जाता है।”[3]

स्त्री को घर की किसी बात में दखलअंदाजी करने का कोई अधिकार नहीं है। अगर वह किसी बात पर अपनी राय प्रस्तुत करेगी तो उसके साथ दुर्व्यवहार कर उसपर अत्याचार किया जाता है इसलिए स्त्री को यहां पर मौन रहना ही श्रेयस्कर है। -

“इन गुंगों-बहरों की बस्ती में
किसे पुकार रही हो सजोनी किस्कू ?
कहाँ लगा रही हो गुहार?
यहाँ तो जाहेर और मांझी थान के देवताभी
बिक जाते हैं बोतल भर दारु में। ”[4]

आदिवासी स्त्री अनेक अभावों से युक्त और निर्धनता के बीच अपना जीवन व्यतीत करती है। छोटी-छोटी बातों के लिए धनीक लोगों के सामने उसे रिरियाना और तिरस्कृत होना पडता है। इतना ही नही उसको घरेलू हिंसा एवं प्रताडना, उपेक्षा तथा अन्याय का भी सामना करना पडता हैं। उनके घर में भी उसका अस्तित्व एक प्रश्नचिन्ह के रुप में होता है। उसको सिर्फ एक उपयोग की वस्तु माना जाता है।

“कोई गेंद
कि जब तब
जैसे चाहा उछाल दी
या कोई चादर
कि जब जहाँ जैसे-तैसे
ओढ-बिछा ली? ”[5]

यहां स्त्री को एक तकिया, खुंटी, अरगनी, डायरी, दीवार, गेंद या चादर का जिस प्रकार उपयोग होता है बिल्कुल उसी प्रकार स्त्री को भी माना गया है।

कवयित्री ने युवा स्त्री की कामना, दुःख, एकाकीपन, तडप और चिंता को भी अभिव्यक्त किया है। विवाह कर वह अपने मायके से बहुत दूर नहीं जाना चाहती है। अपने बाबा मिलने को सुबह आये और शाम को घर पहुंचे इतनी दूरी पर ब्याह कर जाना चाहती है। वह इतने दूर ब्याह कर इसलिए भी नहीं जाना चाहती की आने-जाने के खर्चे के लिए उसके बाबा को घर की बकरियां बेचनी न पडें। इस प्रकार एक युवा स्त्री की अपना मायका और माता-पिता के प्रति रही चिंता को दिखाया गया है। अपने बाबा की

असमय मृत्यू के बाद समाज के लोंगो द्वारा किए जा रहे अन्याय को भी उन्होंने अभिव्यक्त किया है।

निर्मलाजीने एक साधनहीन माँ की पीडा को भी अभिव्यक्त किया है। अनेक अभावों के कारण एक माँ अपने बच्चों को अच्छा भोजन अच्छे कपडे तथा उनको शिक्षित न कर पाने की असमर्थता को भी व्यक्त किया है। यह असमर्थता उसके अंतर्मन को बहुत दुखी बनाती है वह कहती है-

"मेरे बटुए का वजन
इतना हलका है कि
उससे दो शाम की
रोटी ही जुगाड हो सकती है
बडी मुश्किल से।"[6]

इस अपराध बोध का अंधकार उसके अंतर्मन को पूर्णतः घेर लेता है और वह वर्षो से संघर्ष करने पर भी उसे दूर करने में असमर्थ रहती है। अपनी कविताओं में निर्मलाजी स्त्रियों को ही स्वयं अपनी सुरक्षा करने और इन बर्बताओं से संघर्ष करने की प्रेरणा देती हुई कडे शब्दों में कहती है कि-

"हाथ में भाला, फारसा कुल्हाडी लिए
ऐसे राक्षसों का सरेआम
वध करना होगा.... वध करना होगा।"[7]

इस प्रकार स्त्रियों ने अपनी सुरक्षा स्वयं ही करने की प्रेरणा इन पंक्तियों में दी हुई है। आदिवासी वन प्रदेश में रहनेवाले देवताओं, पशु-पक्षियों, वृक्षों से भी वह शिकायत करती हैं किसी स्त्री पर अन्याय होता है तब तुम सबके सब मुँह ढाँपकर सुनते रहे, देखते रहे और मेरी बहने बलात्कारित होती रही। उनकी चीत्कार की गुंज अपने कानों तक पहुँचाई ही नहीं-

"हमारा चढावा भी तुम्हें रास नही आता
वरना
उस रोजलाठी डंडा बन
उन दरिंदों पर बरस पडते
नाग-नागिन, साप बिच्छू भी
अपने जहरीले डंक से
लहुलुहान कर बचा लिए होते
मेरी बहनों की इज्जत...!"[8]

यहां साक्षात वनदेवता से भोग लगाने के बदले इन स्त्रियों की रक्षा वह क्यों नहीं कर पाते यह प्रश्न कवयित्री ने उठाया है।

विनाश के बाद सृजन तो प्रकृति का शाश्वत नियम है परंतू किसी का विनाश करके आधुनिकता का प्रदर्शन मात्र हमारी अदूरदर्शिता और बर्बरता है। कवयित्री यहां स्पष्ट रुप से कहना चाहती है कि, मनुष्यता की किमत पर विकास, नींव रहित मकान जैसा अस्थायी होगा। विकास की बात करने वाले यदि दुसरे मनुष्य की पीडा को नहीं समझेंगे तो उनकी पकड से कुछ छुट सकता है। अपनी कविता 'वहं जो अक्सर तुम्हारी पकड से छुट जाता हैं ' में कवयित्री ने तीन स्त्रियों के माध्यम से सचेत किया है कि एक तरफ विकास की बातें करती स्त्री तो दूसरी तरफ आखों से आँसू बहाती स्त्री परंतू विकास और उन्नति पर चर्चा में मग्न स्त्रियों को ये आँसू दिखाई नहीं देते और अपनी बहस में उन्हे शामिल करना भी याद नहीं रहता –

"ओ, स्त्री-विमर्श में शामिल लेखकों !
क्या तुम बता सकते हो
यह तीसरी स्त्री क्या सोच रही है"[9]

कवयित्री कहती है कि, यदि आज एक स्त्री दूसरी स्त्री से इतनी कमतर है की उनका कोई वजूद नहीं है तो यह विचार करने जैसी बात है।

इस प्रकार कवयित्री निर्मला पुतुलजीने संथाली जनजाति की आदिवासी स्त्री की भावना, वेदना, दुःख, एवं पीड़ा को अपनी कविताओं के माध्यम से अभिव्यक्त किया है । वह स्वयं एक आदिवासी स्त्री होने के कारण आदिवासी स्त्रियों की पीड़ा को उन्होंने भोगा हुआ था और इन्हीं भोगे हुए यथार्थ को उन्होंने कविताओं के माध्यम से अभिव्यक्त किया है। एक स्त्री को घर या समाज में रसोई और बिस्तर के परे देखा ही नहीं जाता है। स्त्री होकर भी वह अपने घर-परिवार तथा समाज की प्रगती करना चाहती है तो उसका साथ या उसको प्रेरणा देने के बजाय पुरुष उलटा उसकी ओर कामुक दृष्टि से देखता है तथा स्त्री को तकिया, खुंटी दीवार, गेंद, चादर जिस प्रकार उपयोग किया जाता हैं। बिल्कुल उसी प्रकार उपयोग किया जाता है इतना ही नहीं अपने ही घरवाले भाई, पिता तथा माँ के द्वारा एक बोतल शराब और मुर्गे के लिए लडकी का सौदा कैसे किया जाता है जैसी अनेक बातों को यहां कवयित्री ने अभिव्यक्त किया है। एक स्त्री की चिंता, पीड़ा या वेदना यहां कोई समझ न पाने की बात भी यहां की गई हैं। एक माँ की ममता, अभावों के कारण अपने बच्चों के लिए कुछ न कर पाने की असमर्थता को भी यहां दिखाया गया है। अतः निर्मलाजीने अपनी कविताओं के माध्यम से निश्चय ही झारखण्ड में स्थित संथाल आदिवासी जनजाति की स्त्रियों के अंतर्मन की पीड़ा, वेदना को वाणी देने का प्रयास किया है।

संदर्भ सूची :

1. समाजशास्त्र विश्वकोश – सं.हरिशंकर रावत, पृ.314
2. नगाडे की तरह बजते शब्द- निर्मला पुतुल, पृ.08
3. अपने घर की तलाश में – निर्मला पुतुल, पृ.105
4. नगाडे की तरह बजते शब्द- निर्मला पुतुल, पृ.24
5. वही, पृ.29
6. बेघर सपने- निर्मला पुतुल, पृ.100-101
7. वही, पृ.88
8. वही, पृ.90
9. वही, पृ.18